पावस मृदुल-मृदुल बरसे

प्रफुल्ल कोलख्यान

संबंध बहुआयामी हुआ करते हैं। कोई संबंध सरल रेखा की तरह नहीं हुआ करता कि उसे पहले उपलब्ध किसी शब्दावली या मुहावरे में समझ लिया जा सके। पिताजी के परिचित बुजुर्ग जो पेशे से अध्यापक थे, मेरे मन में सीधी-सरल रेखा रेखा के माहात्म्य प्रतिपादित करने के लिए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के हवाले से अक्सर दुहराया करते थे कि सीधी रेखा खींचना टेढ़ा काम है, जबकि टेढ़ी रेखा खींचना सीधा काम है। इस उक्ति का प्रभाव मुझ पर कोई कम नहीं पड़ता था। निरुतर मनोदशा में अगर कोई असहमति हो--- और होती ही है--- तो सोच की अंतर्वृत्तियां स्वत:सक्रिय हो जाया करती हैं। पराजित-सा दिखने वाला व्यक्ति ऐसे में किसी गहरी आंतरिक चुनौती से जूझते हुए भीतर से बिद्ध खग की तरह होता है। अपने निरुत्तरपने की मनोदशा से बाहर निकलने की आंतरिक छटपटाहट से जूझता हुआ। एक दिन अचानक मुझे किसी तरह इस निरुत्तरपने से बाहर निकलने की कौंध झलक गई। चुभ कर भीतर ही टूट गये किसी काँटे के अचानक बाहर आ जाने से जैसी राहत मिलती है, वैसी ही राहत के साथ मैंने बुजुर्ग को इस कौंध की झलक से हासिल उत्तर सुनाया। उत्तर यह कि दरअसल सार्थक और सोद्देश्य रेखा खींचना टेढ़ा काम है, चाहे वह सीधी रेखा हो या टेढ़ी रेखा। संसार के सारे महत्त्वपूर्ण कारोबार अधिकांश में तो टेढ़ी रेखाओं के ही कमाल हैं। उसके बाद परिचित बुजुर्ग निरूत्तर हो गए। उनकी इस बिद्ध-मनोदशा का मैं देर तक आनंद लेता रहा! बाद में भी बहुत दिनों तक, उनके दर्शन मात्र से मेरा आनंद उन दिनों पुनर्नव हो जाया करता था। कहना यह है कि सार्थक संबंध न तो सरल रेखा की तरह होते हैं और न ही वक्र रेखा की तरह। वे अपने-आप में विलक्षण हुआ करते हैं। अव्याख्येय। अनिर्वचनीय।

तुलसीदास ने तो कहा कि ‘सुखी मीन जे नीर अगाधा।’ कबीर दास की साखी लीजिए तो ‘जाल परे जल जात बहि, तज मीनन को मोह।’ पानी और मछली में कैसा हिलमिल संबंध है! लेकिन जब जाल पड़ता है तो पानी निकल जाया करता है, मछली फँस जाया करती है। कारण यह कि पानी मछली के बिना भी रह लेता है, लेकिन मछली पानी के बिना नहीं रह सकती है। कहा जा सकता है कि मछली तो पानी से प्रेम करती है लेकिन पानी मछली से सिर्फ मोहित रहा करता है। दुनिया भर की वस्तुओं को पवित्र करने वाला पानी तो सदा अपने अंदर ही जीवन निर्वाह करने वाली मछली का बास भी नहीं दूर कर पाता है। पानी और दूध का संबंध भी बहुत विख्यात है। दूध में पानी अंदर से तो मिला ही रहता है, बाहर से भी ऐसे मिल जाया करता है जैसे वही उसका सहज निवास हो। लेकिन आग पर चढ़ने पर पानी को अपनी औकात का पता चलता है। ज्यों-ज्यों जीवन का ताप बढ़ता जाता है बेचारा पानी भाप बनकर अलग होता जाता है।

पानी का संबंध कमल से भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। पानी के सिर पर नाचता-इतराता कमल कभी यह नहीं समझ पाता है कि पानी उसे न सिर्फ बचाता है, बल्कि सदौव उसे अपने से ऊपर रखकर कर्दम मुक्त भी रखा करता है। कमल तो सदैव आकाश की ओर उन्मुख रहा करता है। सूर्य की तरफ टकटकी लगाए। सूर्य की ही उपस्थिति और संगति के संदर्भ से खुशी या दुखी हुआ करता है, पानी की चिंता उसे कम ही हुआ करती है। तुलसीदास ने कमल के इस आचरण को तब रेखांकित किया था: ‘भानु कमल कुल पोसनिहारा, बुनि जल जारि करै सो छारा।’ सूरज कमल को खिलाता तो रहता है लेकिन उसके पानी को सुखाता भी रहता है। जब कमल-कुल को प्राण का आधार प्रदान करनेवाला पानी सूख जाता है तब जिस सूरज से अपने सहजीवन के स्वप्न को जोड़कर कमल-कुल आजीवन पुलकित रहता है वही सूरज कमल-कुल को जला कर राख भी कर देता है। रहीम ने तब ठीक कहा ही कहा था कि पानी राखिए, बिन पानी सब सून! आज इसी पानी का सब से अधिक अभाव हो गया है। पानी को लेकर वर्तमान सभ्यता का अपना गहरा संकट है। पूछिये मेधा पाटकर से कि पानी रखने का षडयंत्र कैसा होता है! फिर भी कहां बचता है पानी! राजस्थान से ही क्यों, पूरे देश से पूछिए, राजधानी दिल्ली के बाशिदों से ही पूछ लीजिए कि भाई शुद्ध पानी क्या होता है, आप लोगों को मालूम है? आजादी के इतने दिन बाद भी लोगों को पीने लायक पानी नहीं मिल पा रहा है। दो तिहाई भाग पानी के लिए आरक्षित रखने वाली पृथ्वी पर आज पानी के लिए हाहाकार मचा है। पानी कहीं नहीं बचा है--- न चाल में, न चरित्र और न चेहरे में ही। उधर, कुछ लोग तो ग्लेशियर तक को पिघलाने के उद्यम में लगे हैं।

सामाजिकता

संबंधों के समुच्चय का ही एक नाम है। आज का एक बड़ा समाजिक संकट यह है कि संबंधों के बीच का पानी सूख गया है। चाहे संबंध मनुष्य के साथ के हों या अन्य प्राणियों और प्रकृति के ही साथ के क्यों न हों। बचपन में हम लोग खेलते हुए गाते थे, गाते हुए सवाल करते थे--- 'घो-घो रानी कित्ता पानी।' आज प्रतीक्षा है पृथ्वी की तरह फैले स-धैर्य मन को कि कोई उर्ध्वाबाहु 'मेघदूत' को आदरपूर्वक मन के आंगन में फिर से बुलाए, कि कोई निराला महाप्राण उत्कंठित होकर फिर से 'बादल राग' गए कि पावस झूम-झूम कर मृदुल-मृदुल बरसे ताकि जीवन और जगत का मन इस अकाल वेला में फिर से सरसे।

इस सामग्री के उपयोग के लिए लेखक की सहमति अपेक्षित है।
सादर, प्रफुल्ल कोलख्यान